THE ECONOMIC TIMES

Date: 09-10-25

Managing Great Tech Churn Requires Care

Severance plans must exist before AI job loss

ET Editorials

Severance pay is becoming increasingly complex as tech companies downsize their workforces to accommodate automation. High-decibel layoffs of recent years have given way to a more consensual approach that may involve higher outgo. But the effects are mitigated by preserving brand value. Tech employees deemed unfit for an AI-enabled environment receive sweeter severance packages, which reduce the likelihood of litigation and offer laid-off workers a better chance of restructuring their careers. Finding a non-confrontational workaround is vital, because the pace of tech downsizing is expected to pick up as more business functions become automated. The talent needed in the AI environment is also more expensive. This adds to the urgency of replacing 'unproductive' workers.

Investors are nudging the tech workforce reset with guarded optimism. Valuations of top-tier tech companies are held aloft by the promise of AI transformation and the ability of firms to align their talent pool with the new requirements. The process can, of course, be taken too far, with companies possibly facing a shortage of requisite skills as they shed their traditional knowledge base by firing existing workers. There is also the risk of overpromising and under-delivering on AI, which could dent legacy revenue streams. The muted tech workforce transformation, thus, holds out HR lessons for businesses at large, which are expected to climb on to the AI bandwagon down the line. Severance strategies must be in place by the time job displacement due to AI acquires economy-wide dimensions.

The flip side to workforce readjustment is the creation of new opportunities through the tech that is causing disruption. Laid-off tech workers should ideally be able to pursue their new careers without long periods of unemployment. The business model of the tech industry will have to adjust, creating employment opportunities for skills being replaced by AI and the scope to acquire a new set of marketable skills. The great tech churn will provide an early indication of how the job market will adapt to AI.

THE HINDU

Date: 09-10-25

Infinite boxes

The Chemistry Nobel laureates established a new grammar of matter

Editorials

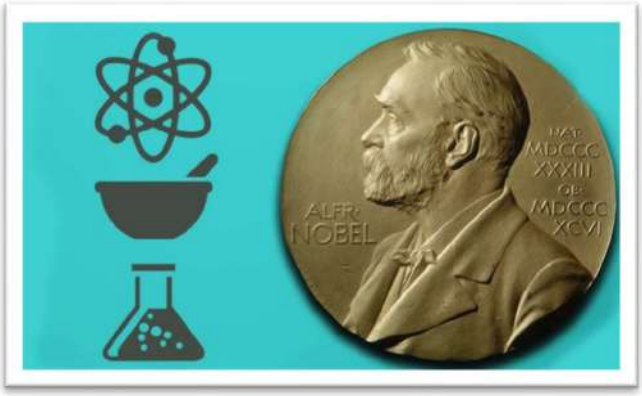

It would not be an overstatement to say that metal-organic frameworks (MOFs) have redefined what materials can do for society. These porous crystalline structures are built from metal ions coordinated to organic linker molecules and offer gigantic amounts of internal surface area. Their cavities can be tuned to trap greenhouse gases, harvest drinking water from air, and store hydrogen or methane as clean fuels. As industries confront climate change and scarce resources, MOFS exemplify chemistry's power to reimagine sustainability, atom by atom. The roots of this year's Chemistry Nobel Prize, awarded to the developers of MOFs, go back to the 1980s, when Richard Robson, then at the University of Melbourne, wondered whether molecular architectures could be designed rather than found. Inspired by a ball-and-stick model used for teaching, he combined copper ions with an organic molecule whose four ends bore nitrile groups. Contrary to expectations, the ingredients self-assembled into an ordered, diamond-like crystal loaded with empty cavities. Susumu Kita- gawa, working in Japan, picked up on the same spirit and made a breakthrough in 1997 when he built a 3D framework of cobalt, nickel or zinc ions linked by bipyridine molecules. When drained of water, the framework remained intact, allowing the gaps between its atoms to hold and release gases as required. In 1998, he also proposed that MOFS could be made of soft solids that 'breathed' as other molecules moved in and out.

Meanwhile in the U.S., Omar Yaghi was dissatisfied with the trial-and-error of conventional reactions and pioneered reticular chemistry, with which he assembled predetermined building blocks into ordered networks. His first frameworks, reported in 1995, were robust two-dimensional nets. By 1999 he unveiled MOF-5, a zinc-based cubic lattice with extraordinary stability and surface area. A few grams contained the internal area of an entire football field. His approach allowed entire families of related MOFs to be designed systematically. Thus, Robson, Kitagawa and Yaghi established a new grammar of matter that allowed others to create thousands of MOFs, some of which moved from prototypes to industrial reactors and semiconductor manufac turing lines. The road ahead is even more promising but also exacting. Researchers are still working to make MOFS more durable in real- world conditions and cheaper to produce at scale. Integrating them into batteries and catalytic filters, for instance, requires engineering as finely tuned as their chemistry. For all these achievements, however, the vision honoured this year transcends any single material. By showing that chemistry can design empty space as precisely as solid matter, the laureates built room not only for molecules but for imagination itself

दैनिक भास्कर

Date: 09-10-25

जजों की भारी कमी की हालत में न्याय कैसे होगा

संपादकीय

हरियाणा में एक जनसभा में गृहमंत्री ने नई तीन अपराध संहिताओं को 21वीं सदी का सबसे बड़ा रिफार्म बताते हुए कहा कि 2026 से एफआईआर दायर होने के तीन साल में फैसला हो जाएगा। सच यह है कि इन संहिताओं के लागू होने के सवा साल बाद भी देश में फॉरेंसिक लैब्स और एक्सपर्ट्स (ट्रेनिंग की संस्थाएं नगण्य हैं), अभियोक्ताओं और पुलिसकर्मियों की कमी तो है ही, जजों की भी भारी कमी बनी हुई है। अगर किसी दबाव में अपराध न्याय प्रक्रिया में लगी इन सभी एजेंसियों को मजबूर किया गया तो न्याय मिलना असंभव होगा। ताजा रिपोर्ट के अनुसार देश में प्रति दस लाख आबादी पर 15 जज (1.47 अरब आबादी लेकिन 21285 जज) हैं, जबकि अमेरिका में 150 और यूरोप में 220 हैं। लॉ कमीशन ने इसे 50 जज तक लाने की सिफारिश वर्षों पहले की थी। देश की राजधानी में फॉरेंसिक एक्सपर्ट्स के लगभग आधे पद खाली हैं। नए कानून में भी समयबद्ध अनुसंधान और फैसले के समय की बाध्यता भी होगी । ज्यूडिशियल डेटा ग्रिड के अनुसार भारत में एक जज औसतन 2200 नए केसेस (रोज 7 केस) का दबाव झेलता है। फिर क्या सरकार ने इस उद्देश्य को हासिल करने के लिए संस्थाएं, संसाधन और एक्सपर्ट्स बढ़ाने का कोई उपक्रम किया है ? प्रथम दृष्टया पीएम के इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए क्या अपेक्षित बजटीय प्रावधान किया गया है? न्यायपालिका पर कुल खर्च में केंद्र का शेयर मात्र 6.3% ही है, जबकि कई राज्यों का इससे ज्यादा ।

Date: 09-10-25

एआई को जादू की छड़ी मानने लगी है दुनिया

रुचिर शर्मा, (ग्लोबल इन्वेस्टर व लेखक)

अमेरिकी अर्थव्यवस्था के लिए बढ़ते खतरों के बावजूद उसकी बड़ी कंपनियां और निवेशक बेफिक्र दिख रहे हैं। ऊंचे टैरिफ से लेकर ढहती इमिग्रेशन नीति, संस्थानों का क्षरण, कर्ज और लगातार बढ़ती मुद्रास्फीति भी उन्हें बेचैन नहीं करती। क्योंकि उन्हें पूरा यकीन है कि आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस इतनी बड़ी ताकत है कि यह सभी चुनौतियों का सामना कर सकती है !

हाल के समय में यह एआई- आशावाद और बढ़ गया है। एआई में निवेश कर रही कंपनियां अरबों डॉलर लगा रही हैं। इसकी इस साल अमेरिकी जीडीपी वृद्धि में आश्चर्यजनक रूप से 40 प्रतिशत की हिस्सेदारी है। और कुछ विश्लेषकों का मानना है कि यह अनुमान भी एआई पर खर्च को पूरी तरह से नहीं दर्शाता है, वास्तविक हिस्सेदारी और भी ज्यादा हो सकती है!

2025 में अभी तक अमेरिकी शेयरों में हुई 80 प्रतिशत बढ़त एआई कंपनियों की ही रही है। इससे अमेरिकी विकास को वित्तपोषित करने और उसे गति देने में मदद मिल रही है, क्योंकि एआई-संचालित शेयर बाजार दुनिया भर से पैसे खींचता है और अमीरों द्वारा उपभोक्ता खर्च में उछाल को बढ़ावा देता है। चूंकि आबादी के सबसे धनी 10 प्रतिशत लोगों के पास अमेरिका के 85 प्रतिशत शेयर हैं, इसलिए जब शेयर बाजार में तेजी आती है, तो उनकी संपत्ति पर सबसे ज्यादा असर पड़ता है। इसलिए इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि नवीनतम आंकड़े बताते हैं, अमेरिका की उपभोक्ता अर्थव्यवस्था काफी हद तक धनी लोगों के खर्च पर टिकी है। शीर्ष 10 प्रतिशत कमाने वालों का उपभोक्ता खर्च में आधा हिस्सा है, जो आंकड़ों का रिकॉर्ड रखे जाने के बाद से अब तक का सबसे अधिक है। अगर एआई को लेकर इतना उत्साह न हो तो अमेरिकी अर्थव्यवस्था ठप पड़ सकती है।

दुनिया के किसी और देश ने इमिग्रेशन का वैसा बूम -एंड-बस्ट (उछाल- मंदी) चक्र नहीं देखा है, जैसा कि इधर अमेरिका में चल रहा है। 2020 के बाद शुद्ध इमिग्रेशन लगभग चार गुना बढ़कर 2023 में 30 लाख से भी ज्यादा के शिखर पर पहुंच गया था, लेकिन ट्रम्प के नेतृत्व में हुए विरोध-प्रदर्शनों ने इस आंकड़े को तेजी से नीचे गिराया। इस साल केवल लगभग 4,00,000 नए प्रवासियों के आने की उम्मीद है, और आने वाले वर्षों में भी यही रुझान रह सकता है। गोल्डमैन सैक्स के विश्लेषण से पता चलता है कि श्रमबल में यह गिरावट अमेरिका की विकास क्षमता को पांचवें हिस्से से भी ज्यादा कम कर देगी। फिर भी, इस जोखिम के प्रति प्रतिक्रिया भी धीरे-धीरे कमजोर होती जा रही है कारण, एआई वैसे भी मानव श्रम की जरूरत घटा देगा।

इसी तरह, अमेरिका में सरकारी घाटा और कर्ज अन्य विकसित बाजारों की तुलना में तेजी से बढ़ रहा है। जीडीपी के लगभग 100 प्रतिशत पर अमेरिकी सरकारी कर्ज दूसरे विश्व युद्ध के बाद अपने चरम के करीब है और अपनी वर्तमान गति से यह बोझ बढ़ता ही जा सकता है। जब तक कि एआई आर्थिक उछाल लाकर स्थिति को न सुधार ले। उस परिदृश्य में अमेरिकी कर्ज का बोझ स्थिर हो सकता है। वैश्विक बाजार इस सुखद परिदृश्य की ही उम्मीद कर रहे हैं। बॉन्ड निवेशकों ने हाल ही में जापान, फ्रांस और ब्रिटेन सहित उन देशों को कड़ी टक्कर दी है, जिनका घाटा अमेरिका से काफी कम है। इन सभी देशों में सरकारी बॉन्ड की बिकवाली देखी गई है। इनमें से अकेले अमेरिका में ही इस साल 10 साल के सरकारी बॉन्ड यील्ड में गिरावट देखी गई है।

एआई को इतने सारे विभिन्न खतरों के उपाय के लिए एक जादू की छड़ी के रूप में देखे जाने का मुख्य कारण यह है कि इससे उत्पादकता में वृद्धि को उल्लेखनीय बढ़ावा मिलने की उम्मीद है। प्रति कर्मचारी अधिक उत्पादन जीडीपी को बढ़ावा देकर कर्ज के बोझ को कम करेगा। इससे श्रम की मांग घटेगी। और यह कंपनियों को कीमतें बढ़ाए बिना वेतन बढ़ाने में सक्षम बनाकर टैरिफ के खतरे सहित मुद्रास्फीति के जोखिमों को कम करेगा। हाल के वर्षों में अमेरिका में उत्पादकता शेष विकसित दुनिया की तुलना में तेजी से बढ़ी है। उत्पादकता के चमत्कार की संभावना ने घरेलू और विदेशी निवेशकों के इस विश्वास को और मजबूत कर दिया है कि यह अंतर और बढ़ेगा। वे आश्वस्त हैं कि अमेरिका एआई इनोवेशन, बुनियादी ढांचे और एडॉप्टेशन में ऐसी अग्रणी स्थिति बना रहा है, जिसकी बराबरी कोई नहीं कर सकता।

इस नैरेटिव में एक असंगत कहानी डॉलर की है। लेकिन कई विश्लेषक इसकी हालिया गिरावट को विदेशी निवेशकों द्वारा अत्यधिक महंगी मुद्रा में निवेश के बाद अपने निवेश को अधिक सामान्य स्तरों पर सुरक्षित रखने का परिणाम बताते हैं। विदेशियों ने दूसरी तिमाही में अमेरिकी शेयरों में रिकॉर्ड 290 अरब डॉलर का निवेश किया और अब उनके पास बाजार का लगभग 30 प्रतिशत हिस्सा है- द्वितीय विश्व युद्ध के बाद के इतिहास में सबसे अधिक हिस्सेदारी । यूरोपीय और कनाडाई अमेरिकी सामानों का बहिष्कार कर रहे हैं, लेकिन अमेरिकी शेयरों में भारी मात्रा में खरीदारी जारी रखे हुए हैं- खासकर तकनीकी दिग्गज । एक तरह से, अमेरिका को एआई का बड़ा दांव मान लिया गया है। इसका यह भी मतलब है कि एआई को अब अमेरिका के लिए बेहतर प्रदर्शन करना ही होगा, अन्यथा अमेरिकी अर्थव्यवस्था और बाजार उस एक आधार को खो देंगे, जिस पर वे अभी खड़े हैं।

दैनिक जागरण

Date: 09-10-25

एक-दूसरे की जरूरत बने भारत-ब्रिटेन

हर्ष वी. पंत, (लेखक आब्जर्वर रिसर्च फाउंडेशन में उपाध्यक्ष हैं)

ब्रिटिश प्रधानमंत्री सर कीएर स्टार्मर और उनके साथ 125 सदस्यीय विशाल प्रतिनिधिमंडल भारत आ चुका है। बतौर प्रधानमंत्री यह उनका पहला भारत दौरा है। इससे पहले जुलाई में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के ऐतिहासिक ब्रिटिश दौरे के बाद द्विपक्षीय संबंधों के दृष्टिकोण से स्टार्मर के भारत दौरे पर नजरें टिकी हुई थीं। वैश्विक उथलपुथल और टैरिफ को लेकर चल रही खींचतान ने भी इस दौरे का महत्व और बढ़ा दिया है। माना जा रहा है कि पीएम मोदी के ब्रिटिश दौरे पर जिन बिंदुओं पर सहमति बनी थी, इस दौरे पर उनकी प्रगति की समीक्षा

के साथ ही द्विपक्षीय रिश्तों को नए आयाम दिए जाने की व्यापक रूपरेखा भी तैयार की जाएगी। विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों के इतने बड़े दल के साथ स्टार्मर का आना इस दौरे की महत्ता को ही दर्शाता हैं। इस समय ब्रिटिश अर्थव्यवस्था जिन चुनौतियों से जूझ रही है उन्हें देखते हुए यह स्वाभाविक है कि उनसे निपटना सरकार की प्राथमिकता में होगा, क्योंकि मौजूदा परिस्थितियों में प्रधानमंत्री की लोकप्रियता भी प्रभावित हो रही है। इसलिए स्टार्मर चाहेंगे कि वे इस दौरे को अधिक से अधिक सार्थक बनाकर ही स्वदेश लौटें।

स्टार्मर के दौरे के कार्यक्रम की रूपरेखा से ही यही संकेत मिलते हैं कि आर्थिक- रणनीतिक एवं सांस्कृतिक संबंध इसके मूल में हैं। चाहे दौरे के लिए भारत की आर्थिक राजधानी मुंबई का चयन हो या उद्योग जगत के प्रतिनिधियों से उनकी मुलाकात, सीईओ फोरम में भागीदारी हो या ग्लोबल फिनटेक फेस्ट में सहभागिता या भारतीय फिल्म निर्माण से जुड़े केंद्रों का अवलोकन, इन सभी गतिविधियों की आर्थिक एवं सांस्कृतिक कड़ियां जुड़ी हुई हैं। जुलाई में पीएम मोदी के ब्रिटेन दौरे पर जिस मुक्त व्यापार समझौते पर बात बनी थी, उसे प्रभावी बनाने से जुड़ी चर्चा भी इस दौरे के एजेंडे में शामिल हैं। इस बीच, ब्रिटिश कंपनियों द्वारा भारत में बड़े पैमाने पर निवेश की बात भी प्रमुखता से हो रही है, जिससे आर्थिक चुनौतियों से जूझ रहे ब्रिटेन की आर्थिकी को बड़ा सहारा मिलने की उम्मीद है।

यह दौरा उस पहलू को भी रेखांकित करता है कि भारत-ब्रिटेन संबंध अतीत की औपचारिकताओं से आगे बढ़कर व्यावहारिकता और परस्पर लाभ एवं विश्वास पर केंद्रित हो चले हैं। एक समय दोनों देशों के रिश्ते ऐतिहासिक संबंधों और प्रवासियों से तय होते थे, लेकिन अब ये उन बंदिशों से बाहर निकलकर भारत-ब्रिटेन व्यापक रणनीतिक साझेदारी जैसी पहल से निर्धारित हो रहे हैं। इसके तहत दोनों देशों ने वर्ष 2035 तक कुछ महत्वाकांक्षी लक्ष्य निर्धारित किए हैं। इसके जरिये व्यापार एवं निवेश, तकनीकी समन्वय एवं रक्षा सहयोग, जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए साझा प्रयास, स्वास्थ्य एवं शिक्षा का उन्नयन और लोगों के बीच बेहतर सामाजिक संपर्क जैसे बिंदु शामिल हैं। इस दौरे पर इन पहलुओं की समीक्षा होना स्वाभाविक है। इसमें भी व्यापार एवं निवेश और सामरिक रणनीति के ही मुख्य रूप से केंद्र में रहने के आसार हैं।

दोनों देशों ने अपने व्यापार को बढ़ाकर जल्द ही 42 अरब पाउंड तक ले जाने का महत्वाकांक्षी लक्ष्य तय किया है। इसमें मुक्त व्यापार समझौते की भूमिका अहम होने वाली है। करीब तीन साल के अथक प्रयासों के बाद अमल में आया यह व्यापार समझौता इतनी ठोस बुनियाद पर किया गया है कि अब जिन देशों के साथ मुक्त व्यापार समझौतों पर चर्चा हो रही हैं, उसमें यही समझौता मानक बन गया है। इससे मिलने वाले परस्पर लाभ को इसी से समझा जा सकता है कि जहां ब्रिटेन के एल्कोहल उद्योग एवं वाहन उद्योग की भारत जैसे बड़े एवं उभरते बाजार में पहुंच बनेगी, वहीं भारत के कपड़ा, चमड़ा एवं रत्न आभूषण जैसे व्यापक श्रम खपत वाले उद्योगों को ब्रिटेन जैसे आकर्षक बाजार में पैठ बढ़ाने में मदद मिलेगी। ट्रंप की आक्रामक नीतियों के इस दौर में यह समझौता और अधिक उपयोगी साबित होता दिख रहा है।

भारत और ब्रिटेन के बीच बढ़ते समन्वय के बीच कुछ गतिरोध अभी भी बने हुए हैं। जैसे व्यापार समझौते के बावजूद ब्रिटेन में भारत के स्टील एवं फर्टिलाइजर उत्पादों को लेकर कुछ हिचक का माहौल है। इसके पीछे इन उद्योगों के कार्बन उत्सर्जन को एक कारण बताया जा रहा है। इसी तरह भारत में ब्रिटिश कानूनी सेवाओं को लेकर भी विरोध के स्वर सामने आए हैं। व्यापार समझौते के बाद उम्मीद बंधी थी कि भारतीय पेशेवरों के लिए ब्रिटेन जाने की राह और सुगम होगी, लेकिन उसमें अपेक्षित रूप से सकारात्मकता नहीं देखी जा रही है। संभव है कि स्टार्मर के दौरे पर इन बिंदुओं को लेकर भी कुछ चर्चा के साथ कोई स्वीकार्य समाधान निकालने की दिशा में प्रयास किए जाएं।

सामरिक सहयोग भी द्विपक्षीय संबंधों के केंद्र में बना हुआ है। चूंकि दोनों देश कई बिंदुओं पर साझा सोच रखते हैं, इसलिए सहयोग का मोर्चा भी सुगम दिखता है। समकालीन वैश्विक परिस्थितियों को भांपते हुए ब्रिटेन ने भी हिंद-प्रशांत क्षेत्र में अपनी पैठ बढ़ाने का समझदारी भरा रुख अपनाया है। इस क्षेत्र में भारत का प्रभाव उसे एक स्वाभाविक साझेदार बनाता है, जो पिछले कुछ समय में ब्रिटेन के साथ बढ़ रही सक्रियता में नजर भी आ रहा है। हिंद-प्रशांत क्षेत्र में उत्पन्न चुनौतियों को लेकर भी दोनों देश एकसमान दृष्टिकोण रखते हैं। चीन की बढ़ती आक्रामकता पर अंकुश से लेकर सामुद्रिक आवाजाही को सुगम एवं सुरक्षित बनाने से लेकर आपूर्ति श्रृंखलाओं में स्थायित्व और संतुलन को लेकर भी दोनों देश एक ही धरातल पर दिखते हैं। सामरिक मोर्चे पर संबंधों को और प्रगाढ़ बनाने की दिशा में रक्षा तकनीक साझेदारी और रक्षा उत्पादन को लेकर भी कोई सहमति बन सकती है। साथ ही खुफिया सूचनाओं को साझा करने की राह में भी अवरोध दूर किए जाने के पूरे प्रयास होंगे। बदलते वैश्विक ढांचे और परिस्थितियों में भारत-ब्रिटेन साझेदारी निश्चित रूप से एक बड़ी भूमिका होगी। स्टार्मर का यह दौरा इस साझेदारी को गति प्रदान करने का काम करेगा।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 09-10-25

अप्रासंगिक होती बहुपक्षीय व्यवस्था!

संपादकीय

क्या चहुपक्षीय व्यवस्था में अभी दुनिया को देने के लिए कुछ शेष है ? अपनी तमाम खामियों और अक्षमताओं के बावजूद वह हाल तक एक ऐसी व्यवस्था बनी रही जिसके तहत वैश्विक महत्त्व के मुद्दों को उठाया जाना चाहिए और उठाया जाता रहा है। इस व्यवस्था में खामियां तब पैदा हुई जब अमेरिका ने उन दशकों के दौरान स्थापित मानदंडों को भंग किया जब वह निर्विवाद रूप से वैश्विक नेतृत्व की भूमिका में था। चीन के एक

विघटनकारी शक्ति के रूप में उभरने के बाद ये दरारें और गहरी हो गई। अब जबकि डॉनल्ड ट्रंप के दूसरे कार्यकाल में अमेरिका ने बहुपक्षीयता की अवधारणा के विरुद्ध सक्रिय रुख अपना लिया है तो ऐसा प्रतीत होता है कि व्यापक आर्थिक स्थिरता, व्यापार प्रबंधन और सुरक्षा संबंधी विवाद जैसे प्रमुख लंबित मुद्दों को अब बहुपक्षीय प्रणालियों के जरिये नहीं सुलझाया जा रहा है।

वृहद आर्थिक स्थिरता की बात करें तो विश्व युद्ध के बाद की व्यवस्था अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष बानी आईएमएफ पर निर्भर रही है। बीते दशकों में आईएमएफ ने ही अर्जेंटीना को कई बार उबारा। पाकिस्तान के अलावा लैटिन अमेरिका का वह देश ही एक ऐसा मुल्क है जिसे बार-बार फंड की मदद की जरूरत पड़ी है। वह एक बार फिर मुश्किल में है। इस बार संकट अधूरे सुधारों और राजनीतिक अस्थिरता से उत्पन्न हुआ है। परंतु इस बार अमेरिकी वित्त विभाग ने इस मुल्क को बचाने के लिए खुद दखल दिया है। गत सप्ताह अमेरिकी वित्त मंत्री स्कॉट बेसंट ने कहा कि अमेरिका और अर्जेंटीना 20 अरब डॉलर के एक पैकेज को लेकर चर्चा कर रहे हैं। इसके चलते अर्जेंटीना की मुद्रा में तेजी आई। बेसेंट ने कहा कि अमेरिका, अर्जेंटीना को संकट से उबारने के लिए हर संभव प्रयत्न करेगा। तथ्य यह है कि आईएमएफ में ऐसा ऋण कार्यक्रम तैयार करने की क्षमता है और वह अर्जेंटीना को बेपटरी होने से बचाने के लिए जवाबदेही ढांचा तैयार कर सकता है। अमेरिकी वित्त विभाग के पास वह क्षमता नहीं है लेकिन उसके पास वह राजनीतिक प्रभाव है जो आईएमएफ के पास नहीं है। राष्ट्रपति ट्रंप ने बार-बार यह दावा किया है कि उनमें युद्ध समाप्त करवाने की क्षमता है। उन्होंने कई संघर्षों का उल्लेख भी किया है जिनके बारे में उनका कहना है कि उनकी मध्यस्थता के कारण वहां शांति स्थापित हुई। यहां तक कि गत सप्ताह उन्होंने गाजा के लिए एक नई शांति योजना पेश की। ट्रंप के दावों में कितनी सचाई है वह कोई मुद्दा नहीं है। मुद्दा यह है कि उन्होंने अमेरिकी शक्ति का प्रयोग करते हुए वह सब खुद करने का प्रयास किया है वह इसे अपनी निजी सौदेबाजी क्षमता की देन मानते हैं सुरक्षा परिषद सहित संयुक्त राष्ट्र की इसमें कोई भूमिका नहीं है। संयुक्त राष्ट्र इकलौता ऐसा बहुपक्षीय संस्थान नहीं है जिस ट्रंप के कदमों ने अनुपयोगी सा बनाया हो। उन्होंने नए व्यापार समझौतों पर भी ध्यान दिया है। उनमें से कई ऐसे तैयार किए गए हैं कि वे अमेरिकी व्यापार और शुल्क नीतियों को असाधारण रूप से तवज्जो देते हैं। यह विश्व व्यापार संगठन के सर्वाधिक तरजीही राष्ट्र यानी एमएफएन के सिद्धांत का उल्लंघन है। ध्यान रहे कि विश्व व्यापार संगठन की स्थापना में वह एक बुनियादी सिद्धांत रहा है। वह पहले ही विवाद निस्तारण केमंच के रूप में अपनी ताकत गंवा चुका था। अब व्यापार नीति में सभी देशों के साथ समान व्यवहार की बुनियादी भावना भी समाप्त हो चुकी है।

विश्व युद्ध के बाद की बहुपक्षीय व्यवस्था का उद्देश्य था शक्ति को यथासंभव सीमित रखना। शीत युद्ध के द्विध्रुवीय विश्व में इस प्रणाली की कुछ उपयोगिता थी, विशेष रूप से नए आजाद हुए और उपनिवेश मुक्त देशों के संदर्भ में एकध्रुवीय व्यवस्था के दशकों में इसने कुछ हद तक अमेरिका की कार्रवाइयों पर अंकुश लगाने का काम किया। लेकिन अब जबकि अमेरिका ने एक विघटनकारी रास्ता अपना लिया है, तो वह स्पष्ट हो गया है कि इस प्रणाली की अपनी कोई शक्ति नहीं है। इसकी शक्ति हमेशा उतनी ही रही, जितनी कि महाशक्ति ने उसे

दी। अब जब व्हाइट हाउस वह मानता है कि वह समस्याओं को स्वयं हल कर सकता है, तो बहुपक्षीय प्रणाली के पास करने को बहुत कुछ बचा नहीं है।

जनसत्ता

Date: 09-10-25

दरकते पहाड़

संपादकीय

हिमालयी राज्यों में पहाड़ों के दरकने का सिलसिला आखिर क्यों शुरू हो गया है ? हिमाचल प्रदेश के बिलासपुर में हुए हादसे ने एक बार फिर यह सवाल खड़ा कर दिया है। कहीं यह विकास की धारा में पहाड़ों की प्रकृति से छेड़छाड़ का नतीजा तो नही है ! बाढ़ और भूस्खलन की बढ़ती घटनाएं इसी ओर इशारा कर रही हैं। गौरतलब है कि बिलासपुर जिले के बरठीं में मंगलवार शाम को पहाड़ का एक हिस्सा टूट कर निजी बस पर जा गिरा, जिससे कई लोगों की जान चली गई। कहा जा रहा है कि जिस जगह यह हादसा हुआ, वहां पहाड़ से अक्सर पत्थर गिरते थे। इसके बावजूद उस स्थान को चिह्नित कर सुरक्षा के इंतजाम नहीं किए गए। यह गंभीर चिंता का विषय है कि पहाड़ी राज्यों में भूस्खलन से हादसे लगातार बढ़ रहे हैं, मगर इसे सिर्फ भारी बारिश से जोड़कर ही देखा जाता रहा है। जबकि अनियंत्रित निर्माण कार्यों और वन भूमि के क्षरण के पहलू की अनदेखी की जा रही है।

इसमें दोराय नहीं कि हम पहाड़ों को संरक्षित करने के बजाय उन्हें लगातार क्षति पहुंचा रहे हैं। पहाड़ों की सुंदरता पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित करती है और उनकी सुविधा के लिए वहां नई सड़कों का निर्माण एवं विस्तार के साथ सुरंगें तैयार की जा रही हैं। जाहिर है, इसके लिए पहाड़ों को काटा जा रहा है, जिससे वे अंदर से खोखले हो रहे हैं। सैलानियों की बढ़ती संख्या और वाहनों का दबाव भी पहाड़ों को झेलना पड़ रहा है। रही- सही कसर पेड़ों की अनियंत्रित कटाई ने पूरी कर दी है। अब पहाड़ इतने कमजोर हो गए हैं कि भारी बारिश या बादल फटने की स्थिति में वे खुद को संभाल नहीं पाते हैं। इसका नतीजा बाढ़ और भारी भूस्खलन के रूप में सामने आता है । नीति निर्माताओं और जनता को यह याद रखना होगा कि विकास के साथ-साथ पर्यावरण एवं प्रकृति का संरक्षण भी बेहद जरूरी है। अगर ऐसा नहीं तो इसकी कीमत हमें जानमाल के नुकसान के रूप मैं चुकानी पड़ सकती है। अब समय आ गया है कि इस विषय पर गंभीरता से विचार किया जाए और संतुलित विकास की ओर कदम बढ़ाया जाए।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 09-10-25

न्याय में समय

संपादकीय

न्यायपालिका को लेकर इन दिनों चल रही चर्चाएं विचारणीय हैं। इनमें एक बड़ी शिकायत है कि मुकदमों के निपटारे में जरूरत से ज्यादा समय लग रहा है। यह ध्यान देने की बात है कि इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने इसे अत्यंत दुखद स्थिति बताया है और इसके लिए कुछ अधिवक्ताओं की आलोचना की है। न्यायाधीशों को यह शिकायत है कि कई अधिवक्ता न्यायालय की निष्पक्ष सहायता नहीं करते हैं। वाकई यह बात बहुत हद तक सही है कि पूरी तैयारी के अभाव में मुकदमे तारीख -दर- तारीख खिंचते चले जाते हैं। अदालतों में लगातार कार्य का बोझ बढ़ता ही चला जा रहा है। यह रोचक बात है कि लगे हाथ, इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने अपने एक दिन के कार्यों का ब्योरा भी दिया है। एक दिन में अदालत में 91 नए मामले आए, जबकि 182 सूचीबद्ध मामले थे और छह विविध प्रकार के आवेदन थे। इन तमाम मामलों को देखने के लिए अदालत के पास तय समय महज 300 मिनट है। वैसे भी उच्च न्यायालय तक वही मामले पहुंचते हैं, जो जटिल किस्म के होते हैं, अर्थात उन्हें जल्दी निपटाना आसान नहीं होता है।

इस पूरे मामले में एक बात सकारात्मक है कि जरूरत से ज्यादा समय लेने या समय बर्बाद करने वाले वकीलों की न्यायालय ने आलोचना की है । न्यायपालिका में यह उम्मीद की जाती है कि वकील किसी भी मुकदमे को ऐसे रखेंगे कि न्यायाधीशों को किसी फैसले तक पहुंचने में सुविधा होगी। क्या यह सही नहीं है कि अनेक वकील मामलों को जल्दी निपटाने के बजाय बहस या कागजी खानापूर्ति का लंबा रास्ता अख्तियार करते हैं ? क्या यह सही नहीं है कि ज्यादातर न्यायालयों में अधिकतर मुकदमों में केवल तारीख देकर काम निपटा दिया जाता है ? तारीख लेने का काम कौन करता है, यह बताने की जरूरत नहीं पड़नी चाहिए। अगर दोनों पक्ष के वकील तैयारी के साथ आएं, तो जल्दी सुनवाई होती है। यह हमारे यहां सांविधानिक व्यवस्था है कि किसी अपराधी की दलीलों को भी तफ्सील से सुना जाता है। इसलिए आमतौर पर बड़े अपराधियों के वकील भी बड़े होते हैं, जो मुकदमे को जल्दी न्याय तक पहुंचने से रोकने के तमाम जतन करते हैं। ऐसी बात नहीं है कि अदालतों की यह कमी आम

लोगों की समझ में नहीं आती है। अंग्रेजों के जमाने से आज तक लोग यही मानते हैं कि अदालत का चक्कर बुरा होता है । न्याय पाने में पीढ़ियां खप जाती हैं। अनेक आरोपी बाहर घूमते पाए जाते हैं, तो अनेक निरपराध लोग जेल में पड़े रहते हैं।

जैसे इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने न्यायपालिका की एक कमी पर उंगली रखी है, ठीक उसी तरह से तमाम कमियों को निशाना बनाने की जरूरत है। यह समझने वाली बात है कि इंसाफ जब वक्त पर नहीं मिलता है, तब अदालतों पर लोगों का इकबाल भी कम होता है। अनेक वकीलों के ही नहीं, बल्कि उनके प्रभाव में आने वाले अन्य लोगों के मन में भी अदालत के प्रति सम्मान कम होता है। यह एक ऐसा विषय है, जिस पर समग्रता में सोचने की जरूरत है। अपने देश की अदालतों में 11 करोड़ 30 लाख मुकदमे लंबित हैं। उच्च न्यायालयों में 63 लाख से ज्यादा और सर्वोच्च न्यायालय में 86 हजार से ज्यादा मुकदमों पर सुनवाई चल रही है। लाखों लोग न्याय के इंतजार में बैठे हैं। ऐसे में, पूरी न्यायपालिका में हर किसी को यह सोचना होगा कि वह अपने पूरे समय का सदुपयोग न्याय सुनिश्चित करने के लिए कैसे कर सकता है ? शायद फिजूल के विवादों से बचने का एक बड़ा समाधान यही है कि अपना पूरा फोकस अपने काम पर रखा जाए।

Date: 09-10-25

नई सुबह का इंतजार करता मणिपुर

जी जी द्विवेदी, (मेजर जनरल (सेवानिवृत्त))

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की 13 सितंबर की मणिपुर यात्रा से वहां के लोगों को यह संकेत गया है कि इस अशांत प्रदेश में शांति और सामान्य स्थिति बहाल करने को लेकर केंद्र सरकार कहीं अधिक सक्रिय भूमिका निभाने को तैयार है। मणिपुर 3 मई, 2023 से ही अशांत है, जब हाईकोर्ट ने इंफाल घाटी में बसे बहुसंख्यक मैतेई समुदाय को आदिवासी का दर्जा देने का आदेश दिया था। राज्य के पहाड़ी इलाकों में बसे अल्पसंख्यक 'कुकी-जो' समुदायों ने इस आदेश को जमीन पर अपने अधिकारों और दूसरे अवसरों के लिए खतरा मानते हुए इसका कड़ा विरोध किया।

इस मुद्दे को लेकर भड़की हिंसा में वहां 260 से अधिक लोगों की जान चली गई, जबकि लगभग 60,000 लोग विस्थापित हुए, जिन्हें 280 राहत शिविरों में पनाह लेनी पड़ी। दोनों समुदायों के बीच दुश्मनी गहराने के कारण राज्य दो भागों में विभाजित हो गया है। मैतेई घाटी क्षेत्र में वर्चस्व रखते हैं, तो कुकी चुराचांदपुर, सेनापति और तेंगनौपाल जैसे पहाड़ी जिलों में हावी हैं। दोनों ही पक्षों के पास अत्याधुनिक हथियार हैं और वे अपने-अपने इलाकों में मजबूत किलेबंदी कर चुके हैं। मणिपुर एक युद्धक्षेत्र में तब्दील हो चुका है, जहां एक बफर जोन बनाकर और सुरक्षा बलों की तैनाती के जरिये हालात को संभाला गया है।

पूर्व मुख्यमंत्री बीरेन सिंह के नेतृत्व वाली सरकार के कथित पक्षपातपूर्ण रवैये के कारण कुकी समुदाय अपने लिए अलग केंद्रशासित प्रदेश मांग रहा है। मणिपुर पुलिस और अर्द्धसैनिक बलों के प्रति लोगों का भरोसा कम हुआ है। जनता के बीच आम धारणा यही है कि सब कुछ तयशुदा हुआ और केंद व राज्य, दोनों ही सरकारें मुद्दों का स्थायी समाधान खोजने के बजाय फौरी निदान पर जोर देती रही है। इस वर्ष फरवरी से ही मणिपुर में राष्ट्रपति शासन लागू है। हालांकि, हिंसा का स्तर वहां कम हुआ है, लेकिन स्थिति नाजुक बनी हुई हाल ही में, कुकी-जो बागी समूहों द्वारा 'ऑपरेशन निलंबन' समझौते पर दोबारा दस्तखत करने जैसी कुछ सकारात्मक बातें हुई हैं। हालांकि, मैतेई समुदाय के संरक्षक संगठन 'सीओसीओएम आई ने इस समझौते की यह कहकर आलोचना कि वह सशस्त्र कुकी- जो संगठनों को वैधता प्रदान करता है। एनएच-2 से नाकेबंदी हटाए जाने की भी खबरें थीं, हालांकि, कुकी संगठनों ने इन खबरों का खंडन कर दिया है।

प्रधानमंत्री ने पहाड़ी क्षेत्रों की लंबे समय से चली आ रही शिकायतों का अपने भाषण में जिक्र किया और स्थानीय शासन को मजबूत करने का आश्वासन भी दिया। पर चूंकि राजनीतिक पुनर्गठन पर उन्होंने कुछ नहीं बोला, इसलिए यह स्पष्ट है कि केंद्र का दृष्टिकोण राज्य का विभाजन किए बिना, जमीनी स्तर पर शासन को मजबूत करना और लोगों में विश्वास बहाल करना है। वर्तमान में, मैतेई समाज ऐसे किसी भी कदम को लेकर संशय में है, जो मणिपुर की क्षेत्रीय अखंडता को प्रभावित कर सकता है और इसके विभाजन का कारण बन सकता है। प्रधानमंत्री ने राष्ट्रीय खेलों में मणिपुर के नौजवानों की भूमिका पर जोर दिया, क्योंकि मणिपुर में खेल- संस्कृति की जड़ें गहरी है और यह जातीय भेदभाव से परे होने का एहसास कराती है। उन्होंने वहां महिला सशक्तीकरण की भी खूब सराहना की।

अपनी संक्षिप्त यात्रा में प्रधानमंत्री ने बातचीत और सुलह की पुरजोर अपील की और इस बात पर जोर दिया कि विकास के लिए शांति अनिवार्य शर्त है। चुराचांदपुर और इंफाल के अपने दो भाषणों में उन्होंने यह सुनिश्चित करना चाहा कि लोगों, विशेषकर युवाओं की आकांक्षाएं इस हिंसा की काली छाया में दबने न पाए। हिंसा के कारण विस्थापित परिवारों के लिए उन्होंने 7,000 आवास निर्माण की घोषणा की। इसके अलावा उन्होंने 3,000 करोड़ रुपये का विशेष पैकेज और राहत कोष के लिए 500 करोड़ रुपये भी दिए। सड़क, रेल और आईटी जैसे संपर्क साधनों को एकता का सूत्र बताते हुए प्रधानमंत्री ने राज्य के भौतिक और राजनीतिक विभाजन को पाटने का प्रयास किया। राज्य में एक अरब डॉलर से भी अधिक के निवेश वाली बड़ी नई परियोजनाओं को मंजूरी दी गई। उन्होंने हिल्स पर स्थानीय शासन को मजबूत करने की मांग पर भी आश्वासन दिया। हालांकि, मैतेई समाज ऐसे किसी भी कदम को लेकर संशय में है, जो मणिपुर के विभाजन का कारण बन सकते हों।

यह विडंबना है कि अंतर्निहित सामाजिक विभाजन के कारण मणिपुर में हिंसा का एक इतिहास रहा है। मगर मैतेई- कुकी वर्तमान संघर्षने जटिलताओं को और बढ़ा दिया है। इस विभाजन को पाटना आसान नहीं होगा, क्योंकि वह समाज के हर तबके में गहरे तक उतर गया है और बुनियादी सामाजिक ताने-बाने को छिन्न-भिन्न कर रहा है। यहां तक कि संस्थाओं का भी ध्रुवीकरण हो गया है। नतीजतन, राहत और पुनर्वास के उपाय भी

पक्षपात करने के आरोपों के घेरे में आ गए हैं। यदि बफर जोन और अस्थायी राहत शिविरों की मौजूदा स्थिति बनी रही, तो मणिपुर के स्थायी रूप से खंडित होकर अलग-अलग इकाई में बदल जाने का खतरा है।

सीमावर्ती राज्य होने के कारण मणिपुर के सुरक्षा संबंधी निहितार्थ भी है, क्योंकि अशांत पड़ोस के साथ- साथ इस क्षेत्र में चीन का साया मंडरा रहा है। नशीले पदार्थों की तस्करी व घुसपैठ के कारण स्थानीय जन- सांख्यिकी पर बढ़ता दबाव अतिरिक्त चुनौती पेश करते हैं। विदेशी ताकतें भी सक्रिय हैं। ऐसे में पूरे पूर्वोत्तर क्षेत्र (एनईआर) की सुरक्षा की समीक्षा आवश्यक है। परंपरागत रूप से देखा जाए, तो मैतेई समुदाय कभी विभाजन का समर्थक नहीं रहा है, वहीं कुकी भी राज्य में सामाजिक सौहार्द के साथ रहने के पक्षधर रहे हैं। ऐसे में, मौजूदा तनाव के माहौल से ऊपर उठकर आंतरिक मतभेदों को आग सहमति से सुलझाया जाना चाहिए।

इस राज्य को सहानुभूति और मदद वाले हाथ से दलदल से निकलने के लिए व्यावहारिक नीति की आवश्यकता है। वर्तमान में, दोनों समुदायों के बीच विश्वास का निर्माण एक बड़ी चुनौती है, जिसके लिए नागरिक समाज को आगे आना होगा। समस्या के समाधान के लिए सभी विकल्पों पर विचार किया जाना चाहिए। अंतरराष्ट्रीय सीमा पर बाड़ लगाना एक सकारात्मक कदम होगा। हमारी 'एक्ट ईस्ट पॉलिसी' तभी फलीभूत हो सकती है, जब पूर्वोत्तर क्षेत्र स्थिर और आंतरिक कलह से मुक्त हो । शांति की राह अवश्य कठिनाइयों से भरी है, मगर मणिपुर को नए सवेरे का इंतजार है।